International Journal of Humanities and Social Science Research
www.socialsciencejournal.in
E-ISSN: 2455-2070
Received: 12-09-2026, Accepted: 12-10-2026, Published: 27-10-2026
Volume 12, Issue 4, 2026, Page No. 97-102

नारनौल का युद्ध एक ऐतिहासिक अध्ययन

किशोर कुमार[1], नीरज कुमार यादव[2]
प्रोफेसर & प्राचार्य, मिहिर भोज पी.जी. कॉलेज, दादरी, गौतम बुद्ध नगर, उत्तर प्रदेश, भारत
शोधार्थी कु0 मायावती राजकीय महिला (स्वायत्त) महाविद्यालय, गौतम बुद्ध नगर, उत्तर प्रदेश, भारत
DOI: https://doi.org/10.66856/ijhssr.2026.12.4.12362

सारांश
यह अध्ययन 1857 के भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के अंतर्गत घटित नारनौल के युद्ध को एक महत्वपूर्ण क्षेत्रीय ऐतिहासिक घटना के रूप में प्रस्तुत करता है। सामान्यतः 1857 के विद्रोह को केवल सैनिक विद्रोह के रूप में देखा गया, किंतु आधुनिक इतिहासकार इसे व्यापक जन–आंदोलन के रूप में स्वीकार करते हैं, जिसमें किसानों, जमींदारों, स्थानीय शासकों तथा आम जनता की सक्रिय भागीदारी रही। नारनौल का युद्ध इसी व्यापक संघर्ष का एक सशक्त उदाहरण है, जिसने हरियाणा क्षेत्र में ब्रिटिश शासन के विरुद्ध संगठित प्रतिरोध को स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त किया। इस संघर्ष में स्थानीय नेतृत्व, विशेष रूप से राव तुला राम एवं अन्य क्षेत्रीय वीरों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही। अध्ययन में यह दर्शाया गया है कि नारनौल का युद्ध केवल सैन्य संघर्ष नहीं था, बल्कि यह स्थानीय स्वायत्तता, सांस्कृतिक अस्मिता और सामाजिक सम्मान की रक्षा का प्रतीक था। इसमें ग्रामीण जनता की सहभागिता ने इसे जनांदोलन का स्वरूप प्रदान किया। यह शोध द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है, जिनमें ऐतिहासिक ग्रंथ, शोध–पत्र, सरकारी अभिलेख और समकालीन विवरण सम्मिलित हैं। इस अध्ययन का उद्देश्य नारनौल के युद्ध की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, उसके कारणों, घटनाक्रम और परिणामों का विश्लेषण कर उसके राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन में योगदान को रेखांकित करना है। यह शोध क्षेत्रीय इतिहास को राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में जोड़ने का प्रयास करता है और यह सिद्ध करता है कि स्वतंत्रता की चेतना भारत के कोने–कोने में व्याप्त थी।

मुल शब्द: नारनौल, 1857 का विद्रोह, हरियाणा, राव तुला राम, ब्रिटिश शासन, जन–प्रतिरोध

1857 का भारतीय स्वतंत्रता संग्राम भारतीय इतिहास का एक ऐसा निर्णायक मोड़ है, जिसने औपनिवेशिक शासन की जड़ों को गहराई से चुनौती दी। यद्यपि औपनिवेशिक और प्रारंभिक राष्ट्रवादी इतिहास लेखन में इस विद्रोह को प्रायः "सिपाही विद्रोह" तक सीमित किया गया, परंतु आधुनिक इतिहासकार इसे एक व्यापक जन–आंदोलन के रूप में स्वीकार करते हैं। इस आंदोलन की विशेषता यह थी कि इसमें केवल सैनिक ही नहीं, बल्कि किसान, जमींदार, स्थानीय शासक, धार्मिक नेता और सामान्य जन भी सक्रिय रूप से सम्मिलित थे। नारनौल का युद्ध इसी व्यापक राष्ट्रीय संघर्ष का एक महत्वपूर्ण क्षेत्रीय अध्याय है, जिसने हरियाणा क्षेत्र में ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध संगठित प्रतिरोध को सशक्त रूप प्रदान किया। नारनौल, जो वर्तमान में हरियाणा के महेंद्रगढ़ जिले में स्थित है, ऐतिहासिक दृष्टि से राजनीतिक, सामरिक और सांस्कृतिक रूप से महत्वपूर्ण रहा है। यह क्षेत्र अरावली पर्वतमाला के निकट स्थित होने के कारण प्राकृतिक सुरक्षा प्रदान करता था तथा उत्तर भारत के आंतरिक क्षेत्रों को जोड़ने वाले मार्गों पर स्थित था। ब्रिटिश शासन की स्थापना के बाद नारनौल और उसके आसपास के क्षेत्रों को प्रशासनिक नियंत्रण में लाने का प्रयास किया गया, जिसके परिणामस्वरूप स्थानीय सामाजिक–आर्थिक संरचना में गहरा हस्तक्षेप हुआ। भारी भू–राजस्व, पारंपरिक अधिकारों का ह्रास, सैनिक भर्ती की जबरन नीतियाँ और न्यायिक हस्तक्षेप ने जनता में असंतोष को जन्म दिया। [1]

1857 के विद्रोह की चिंगारी जब मेरठ और दिल्ली से फैली, तो उसका प्रभाव नारनौल क्षेत्र में भी स्पष्ट रूप से दिखाई दिया। यहाँ के स्थानीय राजपूत सरदारों, विशेषतः राव तुला राम और राव गोपाल देव, ने ब्रिटिश शासन के विरुद्ध खुला प्रतिरोध किया। नारनौल का युद्ध केवल एक सैन्य टकराव नहीं था, बल्कि यह स्थानीय स्वायत्तता, सम्मान और सांस्कृतिक अस्मिता की रक्षा के लिए लड़ा गया संघर्ष था। इस युद्ध में किसानों और ग्रामीण जनता की भागीदारी यह दर्शाती है कि यह विद्रोह सीमित वर्गीय आंदोलन न होकर एक व्यापक सामाजिक प्रतिक्रिया थी।

इतिहास लेखन की दृष्टि से नारनौल के युद्ध का अध्ययन इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि यह 1857 के संग्राम के क्षेत्रीय आयामों को उजागर करता है। परंपरागत इतिहास में बड़े नगरों और प्रमुख नेताओं पर अधिक बल दिए जाने के कारण ऐसे अनेक क्षेत्रीय संघर्ष उपेक्षित रह गए। नारनौल का युद्ध इस तथ्य को रेखांकित करता है कि स्वतंत्रता की चेतना भारत के कोने–कोने में व्याप्त थी और स्थानीय स्तर पर भी संगठित प्रतिरोध की क्षमता मौजूद थी। [2]

शोध का उद्देश्य

1. नारनौल के युद्ध की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं कारणों का अध्ययन करना।
2. 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में नारनौल के युद्ध की भूमिका का मूल्यांकन करना।
3. नारनौल के युद्ध में स्थानीय नेतृत्व एवं जन–भागीदारी का अध्ययन करना।
4. नारनौल के युद्ध के परिणामों एवं ऐतिहासिक महत्व का मूल्यांकन करना।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत अध्ययन में ऐतिहासिक अनुसंधान पद्धति को अपनाया गया है, जिसमें मुख्यतः द्वितीयक स्रोतों से प्राप्त सामग्री का विश्लेषण किया गया। इस शोध हेतु नारनौल के युद्ध तथा 1857 के स्वतंत्रता संग्राम से संबंधित पूर्व प्रकाशित पुस्तकों, शोध–पत्रिकाओं, इतिहास ग्रंथों, संदर्भ ग्रंथों, सरकारी अभिलेखों, गजेटियरों एवं समकालीन इतिहासकारों के लेखों का गहन अध्ययन किया गया। इसके अतिरिक्त, स्थानीय इतिहास पर आधारित शोध–प्रबंधों, विश्वविद्यालयीय जर्नलों तथा विश्वसनीय ऑनलाइन शैक्षणिक स्रोतों से भी आवश्यक तथ्य संकलित किए गए। संकलित तथ्यों की प्रामाणिकता सुनिश्चित करने हेतु विभिन्न स्रोतों के बीच तुलनात्मक अध्ययन किया गया, जिससे

तथ्यात्मक त्रुटियों की संभावना न्यूनतम रहे। उपलब्ध साहित्य को कालानुक्रमिक एवं विषयानुसार वर्गीकृत कर विश्लेषणात्मक एवं वर्णनात्मक पद्धति के माध्यम से निष्कर्ष निकाले गए। इस प्रकार, पूर्ववर्ती शोधों और ऐतिहासिक स्रोतों के समन्वय से नारनौल के युद्ध का एक संतुलित, तथ्यपरक एवं अकादमिक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

अध्ययन का महत्व

नारनौल के युद्ध पर आधारित यह अध्ययन भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के क्षेत्रीय आयामों को समझने की दिशा में एक महत्वपूर्ण प्रयास है। अब तक इतिहास लेखन में प्रमुख रूप से दिल्ली, कानपुर, झाँसी जैसे बड़े केंद्रों पर अधिक ध्यान दिया गया, जिससे अनेक क्षेत्रीय संघर्ष उपेक्षित रह गए। यह शोध उस कमी को पूरा करता है और यह स्पष्ट करता है कि स्वतंत्रता आंदोलन केवल शहरी या सैन्य वर्ग तक सीमित नहीं था, बल्कि ग्रामीण समाज और स्थानीय नेतृत्व ने भी इसमें सक्रिय भूमिका निभाई। यह अध्ययन न केवल ऐतिहासिक तथ्यों को उजागर करता है, बल्कि स्थानीय वीरों के बलिदान और संघर्ष को उचित मान्यता भी प्रदान करता है। इससे नई पीढ़ी में देशभक्ति, आत्मगौरव और ऐतिहासिक चेतना का विकास होगा।

नारनौल की भौगोलिक स्थिति

मध्यकाल में, भौगोलिक स्थिति के आधार पर हरियाणा प्रान्त के विभिन्न हिस्से विभिन्न नामों से पुकारे जाते थे। रेवाड़ी के चारों तरफ का क्षेत्र 'बिघोटा' के नाम से प्रसिद्ध था, जिसे आधुनिक समय में अहीरवाटी कहा जाता है। इसके पश्चिम में स्थित क्षेत्र को 'ढांडोती' क्षेत्र कहते थे, जो कि पश्चिम से पूर्व की दिशा में फैल हुआ एक रेतीला इलाका था, जिसके मध्य में झज्जर बसा हुआ था। ढांडोती के बाद 'हरियाणा' क्षेत्र स्थित था। बिघोटा के दक्षिण में स्थित क्षेत्र 'राठ' के नाम से प्रसिद्ध था, यह संकेत मिलता है कि राठ शब्द की उत्पत्ति 'नाराष्ट्र' शब्द से हुई है। राठ या नाराष्ट्र क्षेत्र कृष्णावती नदी के दक्षिण तथा रेवाड़ी के पश्चिम का मध्यवर्ती क्षेत्र था, इस क्षेत्र का अधिकांश भाग अब वर्तमान अलवर जिले में चला गया है। नारनौल नगर इसी राठ या नाराष्ट्र क्षेत्र में स्थित था। इन क्षेत्रों के एकदम दक्षिण–पूर्व का क्षेत्र 'मेवात' कहलाता था जो कि धांगलवाटी, नाईवाड़ा तथा पहटवाडा नामक तीन पाल में बंटा हुआ था, वर्तमान में इसका कुछ हिस्सा राजस्थान में चला गया है। उपरोक्त सभी क्षेत्रों में राठ या नाराष्ट्र क्षेत्र सर्वाधिक विस्तृत था। कृष्णावती के दक्षिण–पश्चिम से लेकर राजस्थान की सीमा तक का मध्यवर्ती क्षेत्र नलवाटी कहलाता था।

नारनौल जिला महेन्द्रगढ़ की एक तहसील है जो कि नार्थ लेटि. 00 27° 47′ तथा 27 28′ व ईस्ट लोंग 75 76′ तथा 76 17′ के मध्य स्थित है। यह उत्तर से दक्षिण 45 मील तथा पूर्व से पश्चिम में 22 मील में विस्तृत है जिसमें 157 गाँव आते हैं। इसका क्षेत्रफल 367.7 वर्ग मील है। इसकी उत्तरी सीमा पर भिवानी जिला, दक्षिणी–पश्चिमी सीमा पर जयपुर, सीकर, झुन्झुनूँ जिले, पूर्व में अलवर जिला तथा दक्षिण–पूर्व में रेवाड़ी जिला स्थित है।[3] नारनौल नगर नार्थ लेटि. 28°3′ तथा ईस्ट लोंग 76°10′ के मध्य स्थित है। मध्यकालीन नगर ऊँचाई पर स्थित है। यहाँ के सभी घर और भवन मध्यकालीन शैली के हवेलीनुमा हैं और अधिकतर दो मंजिला है अधिकतर हवेलियों में तहखाने स्थित हैं, ये घर और भवन पत्थर, छोटी ईंटों तथा चूने के बने हुए हैं। नगर के चारों तरफ गेट थे जिनके विभिन्न नाम थे जैसे दिल्ली दरवाजा, पश्चिमी दरवाजा, दक्षिणी दरवाजा, कानौड दरवाजा आदि। वर्तमान में केवल एक दरवाजा के ही अवशेष सुरक्षित है शेष लुप्त हो चुके हैं। पुरानी मण्डी (गुदड़ी बाजार), पुरानी सराय, नई सराय, चाँदवाड़ा, मिश्रवाड़ा, फ्रासखाना, बड़ का कुआँ, मीराँजी, खरखड़ी, सराय दूसरान, पीरागाह, नया बाजार, बजाजा बाजार, पुल बाजार आदि मोहल्ले और बाजार मध्यकालीन युग के हैं। इनकी गलियाँ तंग और चढाईदार हैं तथा उन पर पत्थर के फर्श बिछे हुए है। नगर में 15 से अधिक बावड़ियाँ और तालाब थे, जिनमें से अधिकांश खंडित हो चुके हैं। नारनौल में मध्यकालीन स्मारकों व अवशेषों की भरमार है। नारनौल नगर के चारों तरफ कब्रिस्तान व शमशान घाट स्थित थे। नारनौल नगर एक घनी आबादी का नगर था, जिसमें हिन्दू व मुस्लिम लगभग बराबर की संख्या में थे। घनी आबादी की झलक हरियाणा गजिटियर से भी मिलती है। छलक नदी, दोहान नदी व कृष्णावती नदी इसकी प्रमुख नदियाँ हैं। यह नगर छलक नदी के दोनों तरफ बसा हुआ है। छलक नदी पर बना पुल मध्यकालीन नगर के दोनों भागों को आपस में जोड़ता है।

नारनौल क्षेत्र की जलवायु गर्म तथा शुष्क है परन्तु स्वास्थ्यप्रद है। यह क्षेत्र राजस्थान के थार मरुस्थल के बहुत निकट है इसलिए गर्मी के मौसम में धूल भरी आँधियाँ चलती हैं।[4]

नारनौल का ऐतिहासिक परिचय

नारनौल महेन्द्रगढ़ जिले का मुख्यालय है जो कि एक ऐतिहासिक नगर है।'' वर्तमान नारनौल नगर 12वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में अस्तित्व में आया था। सैंसर आफ इंडिया, 1961, पंजाब के अनुसार ''यह कहा जाता है कि नारनौल नगर 900 वर्ष पूर्व ढौसी पहाड़ी के निकट एक विशाल वन के पास स्थापित किया गया था।'' सैंसर आफ इंडिया, 1961, पंजाब का यह कथन सत्य है। इससे पूर्व यह नगर हौसी पहाडी के निकट बसा हुआ था। यह मूल नगर स्थल वर्तमान नारनौल नगर से 5 किलोमीटर पश्चिम में है। मूल नारनौल नगर विशाल व घने वन में स्थापित था जिसे झिंझर वन कहते थे। मूल नारनौल स्थल की पुष्टि पुरातत्व सामग्री, ऐतिहासिक साहित्य तथा प्रचलित किवंदंतियों से होती है। ढौसी पहाडी के निकट 12वीं शताब्दी के आरम्भिक वर्षों में निर्मित कंलदरी मस्जिद के निकट स्थित कुछ प्राचीन समाधियों के अवशेष, बड़ी संख्या में उपलब्ध मिट्टी के घड़ों और बर्तनों के अवशेष, शवों की राख से भरे दबे पड़े मिट्टी के घड़े, उजड़े स्थल से प्राप्त कुछ पत्थर की मूर्तियाँ व शिलालेख, बिखरे पड़े इमारती पत्थर तथा प्राचीन उत्तरापथ के अवशेष इस उजड़े हुए नगर की स्पष्ट तस्वीर प्रस्तुत करते हैं।

मौलवी अहतराम उलद्दीन 'शागिल' ने लिखा है कि 13वीं शदी के आरम्भिक वर्षों में ढौसी के निकट बनी ईदगाह के साथ एक छोटी सी बस्ती बनी हुई थीं यह बस्ती कुछ गौरी जाति के मुस्लिम अफगानों की थी मगर ज्यादातर मुशरकीन (मेल मुलाकात हेतू आने वाले मुस्लिम) रहते थे। लेकिन जिस उजड़े मौजा में ये कुछ गौरी अफगान तथा मुशरकीन रह रहे थे, उस मौजा का नाम क्या था, उसका किसी तारीख से सही पता नहीं चलता अपितु ऐसा पाया जाता है कि यहाँ नारनौल आबाद था।''

1212 ईस्वी अथवा 603 हिजरी में, जब पीर तुर्कमान को उनके गुरुभाई गरीब नवाज़ ख़्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती ने अजमेर से पाँच सहचरों के साथ नारनौल में विलायत स्थापित करने हेतु विदा किया, तब उन्होंने प्राचीन उत्तरापथ मार्ग का अनुसरण करते हुए ढौसी पहाड़ी के समीप पहुँचकर पड़ाव डाला, जिससे यह स्पष्ट होता है कि मूल नारनौल नगर प्राचीन उत्तरापथ मार्ग पर ही स्थित था; इस मार्ग के दोनों ओर नारनौल क्षेत्र में अनेक बावड़ियाँ एवं तालाब निर्मित थे, जिनमें सिरोही और भाँखरी की बावड़ियाँ तथा ढौसी का तालाब आज भी इसके साक्ष्य हैं। स्थानीय किवदंतियों के अनुसार मूल नारनौल नगर प्रारम्भ में ढौसी पहाड़ी के निकट स्थित था, जिसे किसी मुस्लिम आक्रमणकारी द्वारा जलाकर नष्ट कर दिए जाने के पश्चात् वर्तमान नारनौल नगर की स्थापना की गई, जबकि इसकी प्राचीनता हरियाणा की आरम्भिक वैदिक सभ्यता तक जाती है।

ढौसी पहाड़ी के पश्चिम में स्थित महर्षि दिपतोदिक आश्रम, पर्वत–शिखर पर स्थित महर्षि च्यवन आश्रम तथा समीपवर्ती दोहान नदी के तट पर स्थित महर्षि पिप्लाद एवं महर्षि उद्दालक आश्रम लगभग 5500–5000 वर्ष पूर्व वैदिक काल में शिक्षा के सुप्रसिद्ध केन्द्र थे और ये सभी भृगुवंशी ऋषियों से सम्बद्ध थे। सेंसस ऑफ इंडिया, 1961 (पंजाब) के अनुसार ढौसी एक पवित्र तीर्थ स्थल है, जहाँ पाण्डवों के वनवास से सम्बद्ध मान्यता प्रचलित है तथा पर्वत–शिखर पर स्थित 'चन्द्रकूप' के पवित्र जल और सोमवती अमावस्या के मेले का विशेष महत्व है। ढौसी पहाड़ी को प्राचीन काल में 'अराहक' अर्थात् 'ज्ञान का सूर्य' भी कहा जाता था, जो इस तथ्य की पुष्टि करता है कि मूल नारनौल नगर प्राचीन काल में विद्या एवं उच्च शिक्षा का महत्वपूर्ण केन्द्र रहा, जहाँ 5000 से 1000 वर्ष पूर्व की अवधि में अनेक आश्रम फले–फूले, जिनमें से चार के अवशेष आज भी विद्यमान हैं; इन आश्रमों का उल्लेख एम. एल. भार्गव ने अपनी कृति हेमू और उसका युग में महाभारत के आदि एवं नव पर्व के आधार पर किया है। हाल ही में प्राप्त उर्दू लिपि में तैयार, सौ वर्ष से अधिक प्राचीन ढौसी पहाड़ी के मानचित्र से च्यवन ऋषि आश्रम, पर्वत पर स्थित किले तथा वहाँ उपलब्ध औषधीय वनस्पतियों की जानकारी मिलती है, जबकि पहाड़ी की चोटी पर स्थित किला मूल नारनौल नगर की सुरक्षा व्यवस्था से सम्बद्ध था, जहाँ बैराठ के सम्राट अपनी सैनिक टुकड़ियाँ तैनात रखते थे। [5]

नारनौल का प्रथम ऐतिहासिक उल्लेख 1251 ई० में प्राप्त होता है, जब सुल्तान नासिरुद्दीन महमूद (इल्तुतमिश के पौत्र) की सेनाओं ने मालवा के शासक राय जाहर देव को पराजित कर नारनौल को उससे छीनकर दिल्ली सल्तनत में सम्मिलित कर लिया; किंतु दी ऐंसिएंट जियोग्राफी ऑफ इंडिया के अनुसार 6000–5000 वर्ष पूर्व मूल नारनौल नगर तथा उसका परिवेश बैराठ अथवा मत्स्य महाजनपद के अंतर्गत आता था, और यह भी मान्यता है कि पाण्डवों ने अपने अज्ञातवास का कुछ समय बैराठ राज्य की ढौसी पहाड़ी पर व्यतीत किया, जो उस काल में घने व विशाल वनों से आच्छादित थी तथा जिसके निकट ही मूल नारनौल नगर स्थित था; बैराठ का प्रथम ऐतिहासिक उल्लेख चीनी यात्री हूआनसाँग के यात्रा–वृत्तांत में मिलता है, जिसके अनुसार पो–ली–यी–लो राज्य की राजधानी वैराठ थी और यही वैराठ प्राचीन मत्स्य जनपद की राजधानी थी, जिसमें वर्तमान जयपुर का अधिकांश भाग सम्मिलित था; यद्यपि इसकी वास्तविक सीमाएँ स्पष्ट नहीं हैं, तथापि संभावित सीमाओं के अनुसार उत्तर में बैराठ से कोटकासिम तक लगभग 70 मील, पश्चिम में झुंझुनूं से अजमेर तक लगभग 120 मील, पूर्व में साहिबी और बाणगंगा नदियों के संगम से कोटकासिम तक लगभग 150 मील विस्तार था, जिससे कुल परिधि लगभग 490 मील आँकी जाती है; इस संदर्भ में एस.एम. अली का मत है कि हूआनसाँग के समय का बैराठ क्षेत्र ही वस्तुतः मत्स्य जनपद था, क्योंकि इसकी सीमाएँ अलवरदृजयपुर क्षेत्र से मेल खाती हैं, जिसके पूर्व और पश्चिम में अरावली पर्वतमालाएँ थीं, उत्तरी सीमा अरावली श्रेणियों का संगम स्थल थी तथा दक्षिणी सीमा मध्यवन क्षेत्र था; इसकी राजधानी बैराठ अथवा विराट अरावली पहाड़ियों के उस स्थान पर स्थित थी, जहाँ साहिबी और बाणगंगा नदियों का जल परस्पर मिलता है; डी.सी. सरकार के अनुसार प्राचीन बैराठ अथवा विराट देश अलवरदृजयपुरदृभरतपुर क्षेत्र में अवस्थित था, जो दिल्ली के दक्षिण तथा मरुस्थल के पूर्व में स्थित था, और परंपरा के अनुसार विराट में एक शक्तिपीठ स्थापित था जहाँ अम्बिका देवी तथा अमरता के देव भैरव की उपासना होती थी, जबकि राजा विराट मत्स्य राज्य के वही प्रसिद्ध शासक थे जिनका उल्लेख महाकाव्य महाभारत में मिलता है।

हर्षवर्धन के शासनकाल में चीनी यात्री ह्वेनसांग अपनी भारत–यात्रा के दौरान नारेन (आधुनिक नारनौल) आया था। 635 ई. से 637 ई. के बीच वह कुल्लू, रोपड़, सरहिन्द, समाना, टोहाना और हांसी होते हुए नारेन पहुँचा। बैराट राज्य 11वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक निरंतर अस्तित्व में रहा, जिससे यह स्पष्ट होता है कि मौर्य, शुंग, गुप्त तथा वर्धन साम्राज्यों के अधीन यह एक करदाता अधीनस्थ राज्य के रूप में रहा होगा और इन साम्राज्यों की सत्ता सार्वभौमिक प्रकृति की थी, जिसकी पुष्टि ह्वेनसांग के विवरण से भी होती है। उसके अनुसार हर्षवर्धन के समय बैराट राज्य स्थानेश्वर के अधीन था तथा नाराना के समीप सागा (सागरपुर) में विष्णु–स्थल स्थित था, जो आज भी वर्तमान नारनौल नगर के निकट विद्यमान है। 647 ई. में हर्षवर्धन की मृत्यु के पश्चात् उसके साम्राज्य का पतन हो गया और 7वीं शताब्दी के अंत से 780 ई. तक श्रीकण्ठ (हरियाणा), कुरुक्षेत्र तथा वैराट के राज्य कन्नौज के शासक यशोवर्मन के अधीन रहे। 833 ई. में गुर्जर–प्रतिहार सम्राट नागभट्ट द्वितीय ने न केवल बंगाल के पाल शासक धर्मपाल को पराजित कर गंगा–यमुना दोआब से उसके प्रभुत्व का अंत किया, बल्कि अनर्त, मालवा, किरात, तुरुष्क तथा मत्स्य (बैराट) आदि राज्यों के दुर्गों को भी जीतकर अपने अधीन कर लिया। गुर्जर–प्रतिहार साम्राज्य के विघटन तक ये क्षेत्र उसी के अंग बने रहे और उसके पश्चात् पुनः स्वतंत्र हो गए। बैराट का अगला उल्लेख महमूद गजनवी के शासनकाल में मिलता है, जिसने इस राज्य के राजा पर आक्रमण किया; 1009 ई. में अपने छठे आक्रमण के दौरान महमूद गजनवी ने नारेन पर अधिकार कर लिया, जिसकी पहचान कनिंघम ने बैराट के नारायण के रूप में की है। [6]

फिरिश्ता के विवरण के अनुसार 413 हिजरी (1022 ई.) में महमूद ग़ज़नी को यह ज्ञात हुआ कि कैरात और नारदीन नामक दो पर्वतीय क्षेत्रों–जिन्हें कनिंघम ने क्रमशः बैराठ और नारायण क्षेत्र के रूप में पहचाना हैकृके निवासी अब भी मूर्तिपूजा करते थे, जिनमें कुछ स्रोतों के अनुसार नरसिंह की पूजा प्रमुख थी। इस सूचना के आधार पर महमूद ग़ज़नी ने वहाँ के शासक पर आक्रमण किया और एक भीषण तथा रक्तरंजित युद्ध के उपरांत हिन्दुओं को पराजित किया। युद्ध में पकड़े गए लोगों को बलपूर्वक इस्लाम स्वीकार करने के लिए विवश किया गया। अबू रेहान अल–बेरूनी के अनुसार, आक्रमण के परिणामस्वरूप नगरों को ध्वस्त कर दिया गया और स्थानीय जनसंख्या आंतरिक क्षेत्रों की ओर पलायन कर गई। नारायण क्षेत्र के लोग घने वनों के मध्य मुंडेरी पहाड़ी के समीप स्थित नन्दीग्राम नामक गाँव के पास जाकर बस गए। इसी क्रम में शोध संस्थान इंटैक, हरियाणा का यह मत है कि मूल नारनौल नगर को महमूद ग़ज़नी द्वारा लूटा गया, जलाकर नष्ट कर दिया गया तथा वहाँ स्थित आश्रमों, तीर्थस्थलों, मंदिरों, ढौसी पहाड़ के किले और उसके भीतर निर्मित सेनापति के महल को भी ध्वंस करवा दिया गया, जिसके फलस्वरूप वह नगर नष्ट होकर भूमि के नीचे दब गया। वर्तमान समय में भी मूल नारनौल के स्थल पर उसके अवशेष दबे होने की संभावना व्यक्त की जाती है। साथ ही यह भी उल्लेख मिलता है कि ढौसी पहाड़ी पर हिन्दू, जैन एवं बौद्ध धर्मों से संबंधित अनेक तीर्थस्थल विद्यमान थे।

फिरिश्ता द्वारा वर्णित कैरात और नारदीन (अथवा बैराठ और नारयान) नामक दोनों पहाड़ी क्षेत्र भौगोलिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से पूर्णतः समान प्रतीत होते हैं। दोनों के बीच की दूरी लगभग 40 कोस बताई गई है, दोनों ही पर्वतीय क्षेत्र हैं, घने वनों से आच्छादित हैं, जलाशयों और रहस्यमयी गुफाओं से युक्त हैं। दोनों स्थानों पर स्थित कुण्डों के समीप पड़ी चट्टानों को लोकपरंपरा में भीम से जोड़ा जाता है – ढौसी पहाड़ी में इन्हें भीम की पंसेरी, दससेरी आदि कहा जाता है, जबकि बैराट नगर के कुण्ड की चट्टानों को भीम द्वारा फेंकी गई चट्टानें माना जाता है। इसके अतिरिक्त, दोनों ही स्थानों का पांडवों से संबंध बताया गया है तथा दोनों क्षेत्रों के निवासी नरसिंह की पूजा करते थे।

इन समानताओं के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि ढौसी पहाड़ी के समीप स्थित नगर ही नारयान अथवा नारदीन था। इस प्रकार फिरिश्ता द्वारा उल्लिखित नारयान और ह्वेनसांग द्वारा वर्णित नारान वास्तव में मूल नारनौल नगर के ही पर्यायवाची नाम हैं। अन्य लेखकों ने भी मूल नारनौल के लिए नारान और नारयान से मिलते–जुलते नामों का प्रयोग किया है। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि उपर्युक्त सभी नाम और स्थान मूल नारनौल नगर के लिए ही प्रयुक्त हुए हैं तथा नामों में जो अल्प भेद दिखाई देता है, वह भाषाई, लिपिगत एवं बोलचाल (लिंग्विस्टिक) भिन्नताओं – जैसे अरबी, फारसी, उर्दू, चीनी और अंग्रेज़ी लिपियों – के कारण उत्पन्न हुआ है।

महमूद गजनी के आक्रमण के पश्चात् बैराठ साम्राज्य खण्डित हो गया तथा उसके खण्डहरों पर कई छोटे–बड़े राज्य स्थापित हो गए जैसे–भदानक राज्य, मेवात राज्य, धौलपुर राज्य, करावली राज्य, बैराठ राज्य आदि ये सभी यदुवंशी राज्य थे। [7]

नारनौल का युद्ध

जब दिल्ली में स्थित अंग्रेजी शासन को विद्रोहियों की बढ़ती गतिविधियों और उनके संगठित प्रतिरोध की जानकारी मिली, तो वे अत्यंत विचलित और क्रुद्ध हो उठे। इस विद्रोह को कठोर दमन द्वारा कुचलने के उद्देश्य से अंग्रेजों ने अपने एक अनुभवी और सक्षम सैन्य अधिकारी कर्नल जेर्राड के नेतृत्व में नवंबर 1857 के दूसरे सप्ताह में एक सशस्त्र टुकड़ी नारनौल की ओर रवाना की। कर्नल जेर्राड ने 16 नवंबर 1857 को नारनौल पर आक्रमण किया। उस समय भारतीय विद्रोही सेना ने नारनौल की एक सराय को अपना मुख्य मोर्चा बना रखा था, जहाँ लगभग पाँच हजार सैनिक एकत्रित थे और उनके पास लगभग एक दर्जन तोपें भी थीं, जो उनकी सैन्य तैयारी और आत्मविश्वास को दर्शाती थीं। जैसे ही उन्हें अंग्रेजी सेना के आगमन का समाचार मिला, उन्होंने रक्षात्मक स्थिति में बने रहने के बजाय साहसिक निर्णय लेते हुए सराय को छोड़कर आक्रामक रुख अपनाया और शत्रु पर धावा बोल दिया। नारनौल से लगभग दो मील दूर स्थित नसीबपुर गाँव के समीप दोनों सेनाओं के बीच भीषण संघर्ष हुआ, जिसकी शुरुआत दोपहर लगभग बारह बजे हुई। प्रारंभिक चरण में भारतीय सेना का प्रहार इतना तीव्र और प्रभावशाली था कि ब्रिटिश सैनिक उसे सहन नहीं कर सके और कुछ समय के लिए उनमें हताशा और अव्यवस्था फैल गई। किंतु शीघ्र ही कार्बाइनियर्स और 'गाइड्स' नामक ब्रिटिश टुकड़ियों ने साहस का परिचय देते हुए आगे बढ़कर भारतीय रिसाले को रोकने का प्रयास किया, जिससे अंग्रेजी सेना में कुछ उत्साह और संबल का संचार हुआ। इसके बावजूद वे निर्णायक बढ़त हासिल नहीं कर सके, क्योंकि भारतीय रिसाला चट्टान की भाँति अडिग खड़ा रहा और किसी भी दबाव के आगे झुकने को तैयार नहीं था। भारतीय सैनिकों की वीरता और अदम्य साहस का अनुमान समकालीन अंग्रेज इतिहासकार होम्स के इन शब्दों से लगाया जा सकता है कि ''शत्रु ने गाइड्स और कार्बाइनियर्स के आक्रमण को असाधारण बहादुरी से झेला।'' इसी प्रकार मालेसन ने इस संघर्ष को ''एक अत्यंत वीरतापूर्ण युद्ध'' की संज्ञा देते हुए स्वीकार किया कि शत्रु इससे पहले कभी इतनी निर्भीकता और साहस के साथ नहीं लड़ा था; वे न तो डरे और न ही पीछे हटे, बल्कि उन्होंने ब्रिटिश सेना पर ऐसे प्रचंड और विकट प्रहार किए, जिनका सामना अंग्रेजी रिसालों ने अपने सैन्य इतिहास में पहले कभी नहीं किया था। [8]

इस युद्ध में सबसे पहले भारतीय रिसाले के कमाण्डर राव किशन सिंह वीरगति को प्राप्त हुए, जिनकी शहादत ने क्षणिक रूप से सेना के मनोबल को झकझोर दिया और उनके बढ़ते कदम थम से गए, किंतु यह ठहराव पराजय में नहीं बदला, क्योंकि भारतीय सैनिक पीछे हटने के बजाय अपनी भूमि और स्वाभिमान की रक्षा के लिए डटे रहे; मालेसन के शब्दों में, "उन्होंने बहादुरी से अपनी जानें न्यौछावर कर दीं, समर्पण करने का तो ख्याल भी नहीं आया," और यही भावना युद्धभूमि में भारतीय पक्ष की दृढ़ता का प्रमाण बनी। जब संघर्ष के मध्य भारतीय पक्ष कुछ कमजोर दिखाई देने लगा, तभी एक निर्णायक क्षण आया–एक गोली अंग्रेज कमाण्डर जेरार्ड को लगी और वह वहीं ढेर हो गया; जेरार्ड के पतन से अंग्रेजी सेना का मनोबल बुरी तरह डगमगा गया, जबकि भारतीय सैनिकों के हौसले अचानक प्रबल हो उठे और वे वज्र बनकर शत्रु पर टूट पड़े। इस तीव्र आक्रमण को अंग्रेज सेना सह न सकी और कुछ समय के लिए युद्ध का पलड़ा भारतीयों की ओर झुकता प्रतीत हुआ, किंतु यह स्थिति अधिक देर तक कायम नहीं रह सकी। नए अंग्रेज कमाण्डर कोलफिल्ड ने तेजी से बिगड़ती परिस्थिति को संभालते हुए अनुशासन और रणनीति का सहारा लिया तथा अंग्रेजी तोपखाने को एक साथ फायर का आदेश दिया। इसके परिणामस्वरूप ब्रिटिश तोपों के गोले भारतीय सेना के बीच गिरने लगे, जिससे युद्धक्षेत्र में अफरा–तफरी मच गई; सैनिक तोपों की मार से बचने के लिए कभी पीछे हटे तो कभी आगे बढ़े, और जैसे ही वे तोपों के निकट पहुँचे, कोलफिल्ड ने समन्वित और जोरदार आक्रमण कर दिया। भारतीय सैनिकों ने इस भीषण दबाव में भी असाधारण वीरता का परिचय दिया, किंतु युद्ध का भाग्य अंग्रेजों के पक्ष में चला गया। इस निर्णायक चरण में भारतीय पक्ष के सुयोग्य नेता–राव रामलाल, शहजादा मुहम्मद आज़िम तथा जनरल समद खां के पुत्र–वीरगति को प्राप्त हो गए, जिससे सेना के संगठन और नेतृत्व को अपूरणीय क्षति पहुँची और अंततः भारतीय पंक्तियों में भगदड़ मच गई। इस प्रकार अंग्रेजों की विजय हुई और नारनौल का युद्ध क्रांति की उस श्रृंखला का अंतिम अध्याय सिद्ध हुआ, जिसके पश्चात हरियाणा में विद्रोह की ज्वाला धीरे–धीरे शांत हो गई, किंतु इस युद्ध ने बलिदान, साहस और स्वाधीनता के लिए दिए गए संघर्ष की अमिट स्मृति इतिहास में स्थायी रूप से अंकित कर दी। [9]

राव तुला राम और स्थानीय नेतृत्व

1857 के भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में राव तुला राम का योगदान हरियाणा क्षेत्र, विशेषतः नारनौल और रेवाड़ी क्षेत्र में, स्थानीय नेतृत्व की शक्ति और राजनीतिक चेतना का सशक्त उदाहरण प्रस्तुत करता है। राव तुला राम रेवाड़ी रियासत के प्रमुख राजपूत शासक थे, जिन्होंने ब्रिटिश सत्ता के अधीनता स्वीकार करने के बजाय सशस्त्र प्रतिरोध का मार्ग चुना। 1857 से पूर्व ही ब्रिटिश शासन की विस्तारवादी नीतियों, अत्यधिक भू–राजस्व व्यवस्था और स्थानीय शासकों के अधिकारों में हस्तक्षेप के कारण क्षेत्र में असंतोष व्याप्त था, जिसे राव तुला राम ने संगठित रूप प्रदान किया। दिल्ली में विद्रोह की शुरुआत होते ही उन्होंने ब्रिटिश शासन के विरुद्ध खुला विद्रोह घोषित किया और नारनौल को प्रतिरोध का एक प्रमुख केन्द्र बनाने का प्रयास किया। उनके नेतृत्व की विशेषता यह थी कि उन्होंने केवल राजपूत योद्धाओं पर ही निर्भर नहीं किया, बल्कि किसानों, ग्रामीण जनता, पूर्व सैनिकों और स्थानीय सरदारों को भी आंदोलन में सम्मिलित किया, जिससे यह संघर्ष एक व्यापक जन–आंदोलन का स्वरूप ग्रहण कर सका। राव तुला राम ने विद्रोहियों के लिए धन, अस्त्र–शस्त्र और रसद की व्यवस्था की तथा दिल्ली के विद्रोही नेतृत्व से संपर्क स्थापित कर समन्वय का प्रयास किया, जो यह दर्शाता है कि उनका दृष्टिकोण केवल क्षेत्रीय नहीं बल्कि राष्ट्रीय था। नारनौल के युद्ध में राव गोपाल देव जैसे अन्य स्थानीय नेताओं की भूमिका भी उल्लेखनीय रही, जिन्होंने युद्धभूमि में साहस और बलिदान का परिचय दिया। इन स्थानीय नेताओं का योगदान यह स्पष्ट करता है कि 1857 का विद्रोह केवल केंद्रीय नेतृत्व पर आधारित नहीं था, बल्कि इसकी वास्तविक शक्ति

स्थानीय स्तर पर उभरे ऐसे नेताओं में निहित थी, जो जनता की समस्याओं और आकांक्षाओं से सीधे जुड़े हुए थे। यद्यपि संसाधनों की कमी, आधुनिक हथियारों का अभाव और ब्रिटिश सेना की संगठित शक्ति के कारण राव तुला राम को अंततः पीछे हटना पड़ा और उन्हें देश छोड़कर जाना पड़ा, फिर भी उनका संघर्ष औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध भारतीय प्रतिरोध की एक प्रेरणादायक मिसाल बन गया। इतिहास की दृष्टि से राव तुला राम और नारनौल क्षेत्र का स्थानीय नेतृत्व यह सिद्ध करता है कि 1857 का स्वतंत्रता संग्राम केवल आकस्मिक विद्रोह नहीं था, बल्कि यह राजनीतिक चेतना, स्वशासन की आकांक्षा और सांस्कृतिक अस्मिता की रक्षा के लिए किया गया संगठित प्रयास था। अतः राव तुला राम का नेतृत्व न केवल क्षेत्रीय इतिहास में, बल्कि भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन की व्यापक परंपरा में भी एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। [10]

नारनौल का युद्ध और 1857 का व्यापक स्वतंत्रता संग्राम

नारनौल का युद्ध 1857 के भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का एक अत्यंत महत्वपूर्ण क्षेत्रीय अध्याय था, जो यह स्पष्ट करता है कि यह विद्रोह केवल कुछ प्रमुख नगरों या सैनिक छावनियों तक सीमित नहीं था, बल्कि ग्रामीण और अर्ध–ग्रामीण क्षेत्रों में भी गहरी राजनीतिक चेतना और संगठित प्रतिरोध मौजूद था। 1857 के विद्रोह को लंबे समय तक औपनिवेशिक इतिहासकारों द्वारा ''सिपाही विद्रोह'' कहकर सीमित दायरे में प्रस्तुत किया गया, किंतु नारनौल जैसे संघर्ष इस धारणा को चुनौती देते हैं और सिद्ध करते हैं कि यह आंदोलन सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक असंतोष का संयुक्त परिणाम था। नारनौल क्षेत्र में ब्रिटिश शासन के विरुद्ध प्रतिरोध स्थानीय शासकों, विशेषतः राव तुला राम और राव गोपाल देव, के नेतृत्व में उभरा, जिन्होंने किसानों, ग्रामीण समुदायों और स्थानीय योद्धाओं को संगठित कर एक व्यापक जन–आंदोलन का रूप दिया। यह संघर्ष दिल्ली, मेरठ, झांसी और अवध में चल रहे विद्रोहों से वैचारिक और रणनीतिक रूप से जुड़ा हुआ था, जिससे यह स्पष्ट होता है कि 1857 का संग्राम एक परस्पर संबद्ध राष्ट्रीय प्रयास था। नारनौल के युद्ध में जनता की सक्रिय भागीदारी इस तथ्य को रेखांकित करती है कि ब्रिटिश शासन की नीतियों–जैसे अत्यधिक भू–राजस्व, पारंपरिक सत्ता संरचनाओं का विघटन और सांस्कृतिक हस्तक्षेप–ने स्थानीय समाज को गहराई से प्रभावित किया था। इस युद्ध का महत्व केवल सैन्य टकराव तक सीमित नहीं है, बल्कि यह औपनिवेशिक सत्ता के विरुद्ध स्वशासन और सम्मान की भावना का प्रतीक भी था। यद्यपि संसाधनों और आधुनिक हथियारों के अभाव में विद्रोहियों को अंततः पराजय का सामना करना पड़ा, फिर भी नारनौल का संघर्ष 1857 के स्वतंत्रता संग्राम की व्यापकता और जनाधार को समझने के लिए अत्यंत आवश्यक है। यह युद्ध यह सिद्ध करता है कि स्वतंत्रता की चेतना केवल राजधानियों या बड़े नेताओं तक सीमित नहीं थी, बल्कि भारत के दूरस्थ क्षेत्रों में भी समान रूप से विद्यमान थी। इसलिए, नारनौल का युद्ध 1857 के संग्राम को एक समग्र राष्ट्रीय आंदोलन के रूप में स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और भारतीय राष्ट्रवाद के प्रारंभिक स्वरूप को समझने में सहायक सिद्ध होता है। [11]

निष्कर्ष

यह अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि नारनौल का युद्ध 1857 के स्वतंत्रता संग्राम का एक महत्वपूर्ण और प्रेरणादायी क्षेत्रीय अध्याय था, जिसने ब्रिटिश औपनिवेशिक सत्ता के विरुद्ध स्थानीय जनता की संगठित चेतना, साहस और बलिदान को उजागर किया। यह संघर्ष केवल सैन्य टकराव तक सीमित नहीं था, बल्कि इसमें सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक असंतोष की गहरी अभिव्यक्ति दिखाई देती है। राव तुला राम जैसे स्थानीय नेताओं के नेतृत्व में किसानों, ग्रामीण समुदायों और सामान्य जन की सक्रिय भागीदारी यह सिद्ध करती है कि यह आंदोलन जन–आधारित था और राष्ट्रव्यापी चेतना से जुड़ा हुआ था। यद्यपि संसाधनों की कमी और ब्रिटिश सेना की संगठित शक्ति के कारण विद्रोहियों को पराजय का सामना करना पड़ा, फिर भी उनका संघर्ष स्वतंत्रता, स्वाभिमान और आत्मसम्मान की भावना का प्रतीक बन गया। इस प्रकार, नारनौल का युद्ध यह प्रमाणित करता है कि 1857 का आंदोलन केवल कुछ प्रमुख केंद्रों तक सीमित नहीं था, बल्कि यह भारत के दूरस्थ क्षेत्रों में भी समान रूप से जीवंत और प्रभावशाली था, जिसने राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन की नींव को और अधिक सुदृढ़ किया।

संद्धर्भ

1. मजूमदार, आर.सी, (1963), ''द सिपोय म्युटिनी एंड द रिवोल्ट ऑफ़ 1857'', कलकत्ता एल.जी. प्रकाशक वितरक, पृष्ठः 307।
2. कुलप्रीत यादव, और मधुर राव, (2025), ''द बैटल ऑफ़ नारनौल'', विंटेज बुक्स, पृष्ठः 304।
3. नितिन जांगिड़, (2023), ''द हिस्टोरिकल इम्पोर्टेंस ऑफ़ चट्टा बाल मुकुंद राइ नारनौलः अ केस स्टडी'', जर्नल ऑफ हेरिटेज आर्कियोलॉजी मैनेजमेंट, पृष्ठः 16।
4. मोहन लाल, और बी डी वशिष्ठा, (2021), ''फ़्लोरिस्टिक डाइवर्सिटी एंड एथ्नोबॉटनिकल स्टडी ऑफ़ सम पार्ट ऑफ़ साउथर्न हरयाणाः ब्लॉक नारनौल डिस्ट्रिक्ट महेन्दरगढ़ हरयाणा इंडिया'', इंटरनेशनल जर्नल ऑफ बॉटनी स्टडीज, पृष्ठः 644–650।
5. डॉ. अनिल यादव, (2021), ''नारनौलः अ हिस्टोरिकल सिटी'' ए इंटरनेशनल रिसर्च जर्नल ऑफ ह्यूमन रिसोर्स एंड सोशल साइंसेज, पृष्ठः 123–134।
6. ग्रोवर, बी. एल. एवं यशपाल, (2003), ''आधुनिक भारत का इतिहास'', एक नवीन मूल्यांकन, एस चंद एण्ड कंपनी लि० नई दिल्ली, पृष्ठः 210।
7. डॉ. शत्रुजीत सिंह, (2022), ''नारनौल का इतिहास (मध्य काल से पूर्व)'', इंटरनेशनल जर्नल ऑफ सोशियोलॉजी एंड ह्यूमैनिटीज, पृष्ठः 54–59।
8. डॉ. अल्पना सिंह, (2020) ''भारत का इतिहास 1740 से 1857 ई.'', मध्यप्रदेश भोज (मुक्त) विश्वविद्यालय – भोपाल, पृष्ठः 1–152।
9. डॉ. एजाज अहमद, (2016) ष्हरियाणा का इतिहासः प्राचीन काल से आधुनिक काल तक'', के.के. प्रकाशन, पृष्ठः 390।
10. कुलप्रीत यादव, और मधुर राव, (2025), ''द बैटल ऑफ़ नारनौलः राव तुला राम'स सीक्रेट प्लाट टू ओवरथ्रो द ब्रिटिश 1857–1863'', विंटेज बुक्स, पृष्ठः 304।
11. चंद्र, बिपिन, (1988), ''भारत का स्वतंत्रता संग्राम'', पेंगुइन इंडिया नई दिल्ली, पृष्ठः 220।
12. मजूमदार, आर. सी., (1963), ''द सिपोय म्युटिनी एंड द रिवोल्ट ऑफ़ 1857'', कलकत्ता एल.जी. प्रकाशक वितरक, पृष्ठः 307।
13. कुलप्रीत यादव, और मधुर राव, (2025), ''द बैटल ऑफ़ नारनौल'', विंटेज बुक्स, पृष्ठः 304।
14. नितिन जांगिड़, (2023), ''द हिस्टोरिकल इम्पोर्टेंस ऑफ़ चट्टा बाल मुकुंद राइ नारनौलः अ केस स्टडी'', जर्नल ऑफ हेरिटेज आर्कियोलॉजी मैनेजमेंट, पृष्ठः 16।
15. मोहन लाल, और बी डी वशिष्ठा, (2021), ''फ़्लोरिस्टिक डाइवर्सिटी एंड एथ्नोबॉटनिकल स्टडी ऑफ़ सम पार्ट ऑफ़ साउथर्न हरयाणाः ब्लॉक नारनौल डिस्ट्रिक्ट महेन्दरगढ़

हरयाणा इंडिया'', इंटरनेशनल जर्नल ऑफ बॉटनी स्टडीज, पृष्ठः 644–650।
16. डॉ. अनिल यादव, (2021), ''नारनौलः अ हिस्टोरिकल सिटी'' ए इंटरनेशनल रिसर्च जर्नल ऑफ ह्यूमन रिसोर्स एंड सोशल साइंसेज, पृष्ठः 123–134।
17. ग्रोवर, बी. एल. एवं यशपाल, (2003), ''आधुनिक भारत का इतिहास'', एक नवीन मूल्यांकन, एस चंद एण्ड कंपनी लि० नई दिल्ली, पृष्ठः 210।
18. डॉ. शत्रुजीत सिंह, (2022), ''नारनौल का इतिहास (मध्य काल से पूर्व)'', इंटरनेशनल जर्नल ऑफ सोशियोलॉजी एंड ह्यूमैनिटीज, पृष्ठः 54–59।
19. डॉ. अल्पना सिंह, (2020) ''भारत का इतिहास 1740 से 1857 ई.'', मध्यप्रदेश भोज (मुक्त) विश्वविद्यालय – भोपाल, पृष्ठः 1–152।
20. डॉ. एजाज अहमद, (2016) ष्हरियाणा का इतिहासः प्राचीन काल से आधुनिक काल तक'', के.के. प्रकाशन, पृष्ठः 390।
21. कुलप्रीत यादव, और मधुर राव, (2025), ''द बैटल ऑफ़ नारनौलः राव तुला राम'स सीक्रेट प्लाट टू ओवरथ्रो द ब्रिटिश 1857–1863'', विंटेज बुक्स, पृष्ठः 304।
22. चंद्र, बिपिन, (1988), ''भारत का स्वतंत्रता संग्राम'', पेंगुइन इंडिया नई दिल्ली, पृष्ठः 220।